



प्रेमचंद की कहानियों का दृश्य पुनःप्रस्तुतिकरण

¹KM Taruna Devi and ²Dr. Arvind Kumar

¹Research Scholar, Mahakaushal University, Jabalpur, Madhya Pradesh, India

²Professor, Mahakaushal University, Jabalpur, Madhya Pradesh, India

DOI: <https://doi.org/10.5281/zenodo.20157001>

Corresponding Author: KM Taruna Devi

सारांश

उपन्यासकार संस्कृतनिष्ठ ब्राह्मणवादी धर्म की निंदा करता है। गोदान का मुख्य उद्देश्य मनुष्य में मानवीय दृष्टिकोण को जागृत करना है, ताकि समाज समाजवाद और सुखी विश्व के मार्ग पर चलना सीखे। उपन्यास कला और समाज, मनुष्य और उसके युग का संश्लेषण प्रस्तुत करता है। उपन्यासकार ने धर्म, जाति, सामाजिक व्यवस्था और समुदाय पर अपने विचार यथार्थवादी ढंग से व्यक्त किए हैं। लेखक ने गबन में मुद्दों को उजागर किया है। फिर भी उन्होंने निरंतर शिष्ट गरीबी के खिलाफ आजीवन लड़ाई लड़ी। पढ़ना-लिखना, जो हमेशा एक अच्छे कायस्थ लड़के का काम होता है, तीव्र सामाजिक चेतना और विवरण के लिए एक अचूक नज़र ने उन्हें तीन दशकों के साहित्यिक करियर में बदल दिया, जिसमें 14 उपन्यास, 300 लघु कथाएँ, अंग्रेजी क्लासिक्स से कई अनुवाद, असंख्य निबंध और संपादकीय टुकड़े शामिल थे - एक कलम का सिपाही, एक 'कलम का सिपाही'। ऐसे मुद्दे रुचि जगाने में विफल रहते हैं और फिल्म निर्माता द्वारा अलग-अलग कोण बनाने की ओर ले जाते हैं। यह विफलता विचलन के रूप में मानी जाती है जब यह अंततः कथा के समान मार्ग पर नहीं ले जाती है फिर भी समाज को संदेश देने में सफल होती है।

मूल शब्द: प्रेमचंद, पुनः प्रस्तुतिकरण, उपन्यास कला और समाज, मनुष्य।

1. प्रस्तावना

पहली नज़र में यह जानना बहुत स्पष्ट है कि कोई भी पाठक या आलोचक यह मान लेता है कि प्रेमचंद की रचनाएँ केवल निराशा और दुःख से भरी हैं।

प्रेमचंद का साहित्य जीवन के सातों प्रमुख रंगों से परिपूर्ण है, लेकिन असंवेदनशील पाठक की यह एक सामान्य समस्या है। जो इनकी उपेक्षा सतही असंवेदनशील पर्यवेक्षक की तरह करता है, वह असंवेदनशील पाठक ही होता है। अगर पाठक के हृदय में संवेदनशीलता है तो वह जीवन की सुबह और शाम की परछाइयों में अंतर भी देख सकता है। अगर प्रेमचंद की रचना में ऐसी खूबी नहीं है तो उनके साहित्य का सौंदर्यात्मक विश्लेषण असंभव है, भले ही वह पढ़ने के बाद सौंदर्यात्मक आनंद की अनुभूति न करा सके। ऐसे आनंद और सौंदर्यात्मक तत्वों की अनुभूति और खोज के लिए प्रेमचंद की प्रतिनिधि लघुकथाओं का संस्कृत भाषा के सिद्धांतों और सिद्धांतों विशेषकर रस सिद्धांत के आधार पर विश्लेषण करना आवश्यक है। रस सिद्धांत अन्य सभी सिद्धांतकारों में आधारभूत सिद्धांत है। रस शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के एक वाक्यांश 'रस्यन्ते इति रसः' से हुई है। रस का अर्थ है स्वाद लेना, अर्थात् ऐसा कुछ जो स्वाद प्रदान करे जैसे रस के रूप में किसी फल का अर्क। यह मनुष्य के लिए आहार विज्ञान के

रूप में एक महत्वपूर्ण कारक है।

श्रृंगार, अद्भुत वीर से, भयंकरक से वीभत्स और करुण (दया) से रौद्र(क्रोध)। इस प्रकार रसों की संख्या आठ हो गई। स्थैतिक भाव हैं - श्रृंगार के लिए रति, वीर के लिए उत्साह, वीभत्स के लिए जुगुप्सा, रौद्र के लिए क्रोध, हास्य के लिए हास, अद्भुत के लिए आश्चर्य, भयानक के लिए भय और करुण के लिए शोक। भारतीय काव्यशास्त्र में शान्त रस पर भी विचार किया गया है, किन्तु नाट्यशास्त्रियों ने इसे मान्यता नहीं दी है, क्योंकि इसका स्थैतिक भाव शम है, जिसे कलाकार द्वारा मंच पर अभिनय करके परिभाषित नहीं किया जा सकता। इन आठ रसों में से भरतमुनि ने प्रथम चार रसों को अधिक महत्व दिया है, क्योंकि अन्य चार रस प्रथम चार रसों से ही उत्पन्न हुए हैं। भरतमुनि ने नृत्य, संगीत और नाटक के संदर्भ में रस की व्याख्या की क्योंकि नाटक श्रव्य और दृश्य इंद्रियों को प्रभावित करता है। यह आजकल के दृश्य प्रस्तुतीकरण की तरह ही काफी उपयुक्त है जिसने नाटक और रंगमंच की जगह ले ली है, इसलिए रस और उसकी विविधता का सिद्धांत भी लागू होता है क्योंकि यह मनुष्यों और उनके विविध स्वभाव, ज्ञान और अनुभवों में पाया जाता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति में रस को जगाने का स्तर और क्षमता भी अलग-अलग होती है। भरतमुनि के सिद्धांत के अनुसार विभाव, अनुभव और

व्यभिचारी भाव रस की प्राप्ति के तत्व हैं लेकिन स्थैतिक भाव या स्थायी भाव ही रस है।

2. साहित्य की समीक्षा

फातिमा, शबीना. (2018) ^[1], समाज हर व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। समाज में हर व्यक्ति का एक ही महत्व है, लेकिन दुर्भाग्य से लोग एक-दूसरे के साथ भेदभाव करने लगते हैं। सभी एक ही छत्र के नीचे रहते हैं, कई वर्गों, समूहों, जातियों और विभिन्न समुदायों में विभाजित हैं। उच्च वर्ग ने मध्यम वर्ग को दबाने की कोशिश की और मध्यम वर्ग ने दलित वर्ग को दबाया, दोनों ही तरह से दलित वर्ग समाज का शिकार बन गया। समाज में हर जगह उनकी उपेक्षा की गई। कोई गरीब पैदा तो हो सकता है, लेकिन गरीब नहीं मर सकता। मानवता अब नहीं रही, इसलिए रंग, जाति और पंथ के नाम पर भेदभाव दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। मानवता इन चीजों पर आधारित नहीं है। भारतीय समाज में लोगों ने गरीब और दलित लोगों की आवाज को दबा दिया। हाशिए पर पड़े लोगों के पास इतनी ताकत नहीं है कि वे खुद की रक्षा कर सकें। दुनिया भर में लोगों को अलग-अलग तरीकों से हाशिए पर रखा जाता है। हाशिए पर रखा जाना शोषण, दुख, पीड़ा और दर्द पर आधारित है। दूसरी ओर लोगों को धर्म, जातीयता और संस्कृति के नाम पर हाशिए पर रखा गया है। इसलिए, यह सांस्कृतिक मुद्दों और समाज के विभिन्न वर्गों जैसे गरीबी, दलितों, गुलाम अफ्रीकियों, पारिया और अन्य आर्थिक रूप से पिछड़े धर्मों और पुरुष प्रधान समाज में नारीवादी मुद्दों से संबंधित मुद्दों से संबंधित है। साहित्य में लेखकों ने समाज के उन वर्गों की आवाज उठाई, जिन्हें अलग-अलग तरीकों से दबाया गया था। इंडियन राइटिंग इन इंग्लिश में, लेखकों ने हाशिए पर पड़े लोगों के मुद्दों को बहुत ही निर्भीकता से चित्रित किया। मुंशी प्रेमचंद एक ऐसे महान लेखक थे, जो बेजुबान समाज की आवाज बन गए, क्योंकि वे खुद पीड़ित बन गए थे। वे ऐसे महान और साहसी व्यक्ति थे जिन्होंने निरंकुश समाज के पक्ष में लिखने से इनकार कर दिया। अधीनता के उनके अपने अभ्यास ने उन्हें विनम्र लोगों की पीड़ा, दर्द और पीड़ा को पहचानने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने समाज के वंचित वर्ग के मुद्दों को उजागर करने की पूरी कोशिश की।

गोविंद, निखिल. (2019) ^[2], यह अध्याय बीसवीं सदी के पहले भाग में हिंदी के सबसे प्रशंसित गद्य लेखक प्रेमचंद की चुनिंदा रचनाओं का विश्लेषण करता है। अधिकांश टिप्पणीकारों ने प्रेमचंद की कुछ बाद की घोषणाओं का अनुसरण करते हुए, प्रेमचंद को सामाजिक यथार्थवाद की परंपरा के भीतर रखने की कोशिश की है, जो आज भी भारत में लेखन की प्रमुख विधा है। यह अध्याय इस तरह के अध्ययन को पूरक बनाने का प्रयास करता है, यह तर्क देते हुए कि उनके काम में कथानक-तल के नीचे के प्रभावों (प्रलोभन, दुःख, हँसी) की ऊर्जा को अक्सर सामाजिक यथार्थवाद के उपदेशात्मक तरीके के ढांचे को तोड़ते हुए उत्पादक रूप से पढ़ा जा सकता है।

सागरे, सुश्री और मठपति, डॉ. (2020) ^[3]। गोदान के प्रकाशन के साथ ही प्रेमचंद ने सफलता के शिखर को छू लिया। गोदान में आत्मनिरीक्षण की बहुत अधिक प्रेरणा मिलती है, जो गरीब भारतीय किसानों की आत्मा की पीड़ा और घोर गरीबी जैसे परेशान करने वाले विषयों को समझने के लिए बहुत जरूरी है। इन समस्याओं का समावेश उनके उपन्यासों को एक सार्वभौमिक अपील देता है। गोदान केवल दुख की कहानी नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण भारत का यथार्थवादी चित्रण भी है। उपन्यासकार

संस्कृतनिष्ठ ब्राह्मणवादी धर्म की निंदा करता है। गोदान का मुख्य उद्देश्य मनुष्य में मानवीय दृष्टिकोण को जगाना है, ताकि समाज समाजवाद और एक खुशहाल दुनिया के रास्ते पर चलना सीखे। उपन्यास कला और समाज, मनुष्य और उसके युग का संश्लेषण प्रस्तुत करता है। उपन्यासकार ने धर्म, जाति, सामाजिक व्यवस्था और समुदाय पर अपने विचार यथार्थवादी तरीके से व्यक्त किए हैं। सिंह, शैलेन्द्र. (2019). 1920 और 1930 के दशक के प्रख्यात उर्दू-हिंदी लेखक प्रेमचंद की रचनाओं में राष्ट्रवाद का विषय न केवल एक संगठित सिद्धांत के रूप में कार्य करता है, बल्कि अध्ययन के एक परिवर्तनशील और विवादास्पद क्षेत्र का भी गठन करता है, जिसके परिणामस्वरूप विरोधाभासी व्याख्याएँ हुई हैं। एक ओर, उनके राष्ट्रवादी आख्यानो की स्पष्ट रूप से कट्टरता की कमी के लिए निंदा की जाती है, जबकि दूसरी ओर, उनकी तथाकथित विध्वंसक सामग्री के लिए उनकी स्पष्ट रूप से प्रशंसा की जाती है। हालाँकि, आलोचना के इन दोनों ही विपरीत विचारधाराओं में एक सामान्य कमी है, यानी, दोनों ही लेखक के राष्ट्रवादी आख्यानो को उनके किसान विमर्श के साथ मिला देते हैं, जिससे अलग-अलग विषयों की अलग-अलग व्याख्याएँ होने की संभावना समाप्त हो जाती है। यह लेख प्रेमचंद की रचनाओं में राष्ट्रवाद के विषय और विशेष रूप से नागरिक प्रतिरोध के प्रश्न की जांच करता है, ताकि यह प्रदर्शित किया जा सके कि उनके राष्ट्रवादी लेखन में लेखक की प्रतिनिधित्व की राजनीति उनके किसान आख्यानो में पाई जाने वाली राजनीति से किस तरह भिन्न है। यह तर्क देता है कि काल्पनिक किसान की शोषणकारी यथास्थिति के अनुरूपता के लेखकीय मूल्यांकन के विपरीत, प्रेमचंद की राष्ट्रवादी कहानियों में नागरिक प्रतिरोध न केवल आवश्यक और वांछनीय है, बल्कि धर्म (नैतिक कर्तव्य) का पर्याय भी है।

बोस, अनिरबन (2023) ^[5], दलित लेखन समकालीन भारत में 'जाति' के निरंतर बदलते रूपों की सामाजिक और सांस्कृतिक प्रथाओं को समायोजित करता है। यह संस्कृतियों के समाजशास्त्र की आलोचनात्मक अंतरंगता को गले लगाता है, यहाँ तक कि दर्द और अपमान की विरासत से निपटने वाले उप-सांस्कृतिक और क्षेत्रीय रूपों को भी, पाठक के अनुभव के लिए पुनर्विचार किया जाता है। यह शोध पत्र प्रेमचंद (1880-1936) द्वारा अपनी लघु कहानी 'कफन' (कफन) में दलितों और उनकी वर्ग चेतना को चित्रित करने में धूसर क्षेत्रों की जांच करने का प्रयास करता है। यह लघु कहानी स्रोत पाठ 'कफन' का अनुवादित संस्करण है; उत्पीड़ितों और हाशिए पर रहने वालों की आवाज़ और भाषाओं को संप्रेषित करने के महत्व के बारे में महत्वपूर्ण चर्चा का एक चैनल है। अनुवाद प्रक्रिया में ग्रहण का मुद्दा प्रचलित है। वैश्वीकरण के प्रभाव से परे दलित साहित्य अछूता नहीं रहा है। दलित लेखन मुख्यधारा के समाजशास्त्रीय और सांस्कृतिक सौंदर्यशास्त्र को नया रूप देता है, एक जीवित सामाजिक समुदाय के नकारे गए 'स्व' के निर्माण की खोज करता है। दलितों को मुख्यधारा की कला और साहित्य से दूर रखा गया। कभी-कभी उन्हें केवल उपहास की वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जैसा कि घीसू और माधव को लघुकथा 'कफन' में चित्रित किया गया है। प्रेमचंद द्वारा दलितों के चरित्र चित्रण को मुख्यधारा के साहित्य का हिस्सा नहीं माना जाता है। यह वास्तव में निराशाजनक है कि 'कफन' जैसी लघुकथा एक ऐसे साहित्यिक व्यक्ति की कलम से निकली है जिसे उचित नहीं ठहराया जा सकता है या जिसे किसी वर्ग में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है, जो खुद एक अलग वर्ग है। यह स्पष्ट नहीं है कि हमेशा सबाल्टर्न बोल नहीं सकता है, हालाँकि उनका ईमानदार प्रतिनिधित्व अक्सर क्षेत्रीय बोलियों में अधिक जोर देता है, बजाय

अंग्रेजी में भारतीय लेखन के। प्रेमचंद दलित वर्ग चेतना के बजाय उत्तर-औपनिवेशिक शोषण के बारे में अधिक बात कर रहे हैं।

3. बूढ़ी काकी

बूढ़ी काकीयह कहानी वृद्ध महिला की है जो वृद्ध लोगों के प्रति व्यवहार के सामाजिक तथ्यों को उजागर करती है। प्रेमचंद की कहानी बूढ़ी काकी निस्संदेह वृद्धावस्था का संपूर्ण वर्णन है। लेखक ने शब्दों के माध्यम से वृद्ध लोगों की बुढ़ापे के दौरान उनकी मानसिक और शारीरिक स्थिति की कमजोरियों और नकारात्मक पहलुओं का वर्णन किया है। "बुढ़ापा बहुत बचपन का पुनर्जन्म हुआ करता है। बूढ़ी काकी में जिह्वा-स्वाद के सिवा और कोई छाती न थी।" (प्रेमचंद 46)

जिस प्रकार युवा वर्ग सुंदरता की ओर आकर्षित होता है, उसी प्रकार मधुमक्खियों को फूलों से प्रेम होता है। इसी प्रकार सभी मनुष्यों व प्राणियों में इस संसार में किसी न किसी चीज के प्रति आकर्षण छिपा होता है। इस कहानी का प्रमुख पात्र बूढ़ी काकी है, जिसके इर्द-गिर्द पूरी कहानी बुनी गई है। बूढ़ी काकी के जीवन का एकमात्र उद्देश्य जीभ की स्वाद-ग्रन्थियों की संतुष्टि था। लेकिन पूरी फिल्म में उसकी इच्छाएं अतृप्त ही रहती हैं। सिवाय इसके कि वह सभी सांसारिक सुखों से पूरी तरह विरक्त थी। वह केवल अपनी भूख की संतुष्टि के लिए ही सभी कार्य करती थी। फिल्म जगत के बहुमुखी व्यक्तित्व गुलजार ने प्रेमचंद के पाठ को दृश्य रूप में ढाल दिया है या यह कहा जा सकता है कि उन्होंने प्रेमचंद की बूढ़ी काकी के पाठ को पुनः प्रस्तुत किया है। दृश्यों के पहले ही दृश्य में फिल्मकार ने काकी की भगवान के प्रति श्रद्धा (विश्वास) व इच्छा को दर्शाया है, जब वह भगवान राम के मंदिर में पूजा-अर्चना के लिए पहुंचती हैं। लेकिन उसी दृश्य में काकी ने भोग थाल से दो बार मिठाई चुराई है और उसे जोर-जोर से निगल लिया है। इस चित्रांकन में दिखाया गया है कि फिल्म निर्माता ने देवत्व पर मानवीय और जैविक शक्ति की जीत का बखान किया है। उसी दृश्य में काकी ने पुजारी द्वारा दिए गए पवित्र जल 'चरणामृत' को अपनी हथेली पर लिया। इसे पीते हुए उन्होंने कई बार भगवान का नाम लिया। यह दर्शाता है कि धर्म के नाम पर छिपे पाखंड ने छद्म रूप में अपने पंख फैलाए, अशिक्षित समाज में स्वस्थ रूप से पनपा, जो अंग्रेजी साहित्य के विक्टोरियन युग की याद दिलाता है। मार्क्सवाद के आगमन पर धर्म और विज्ञान के बीच संघर्ष शुरू हो गया, संघर्ष जारी रहा।

समाजवाद की परिभाषा में मानवतावाद। प्रेमचंद ने अपने लेखन में हमेशा मानवतावाद को वरीयता और ऊंचाई दी, जिसे गुलज़ार ने भी पूरी फिल्म में बनाए रखने की कोशिश की है।

प्रेमचंद ने बूढ़ी काकी का परिचय देते हुए समाज की द्वैधता और कपटता पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। पति और बच्चों की मृत्यु के बाद वह बुद्धिराम के परिवार की जिम्मेदारी के रूप में भतीजे और उसकी पत्नी के साथ रहती है। आगे प्रेमचंद ने बुद्धिराम के आंतरिक और वास्तविक स्वभाव तथा औपचारिक व्यवहार में द्वैधता का विस्तार से वर्णन किया है। वास्तव में वे अपने सामाजिक व्यवहार से भिन्न थे। बुद्धिराम और उसकी पत्नी को सज्जन और महान माना जाता था, लेकिन वे चतुराई के प्रमुख घटक थे। सज्जनता उनसे कोसों दूर थी, खासकर जब पैसे का सवाल आता था। एक ओर लेखक रूपा को कठोर और असभ्य व्यवहार वाली के रूप में पेश करता है, दूसरी ओर वह भगवान से भी डरती थी। भय के कारण वह बदल गई। बुद्धिराम की तुलना में काकी ने रूपा को प्राथमिकता दी। उसकी इच्छाओं को अंततः रूपा की कृपा से ही आकार मिला।

बुधिया के बेटे द्वारा काकी को सताना और चिढ़ाना संस्कारों के महत्व को दर्शाता है, अर्थात् संस्कारों की कमी के कारण माता-पिता द्वारा बच्चों में संस्कारों का अनुकरण करना। साथ ही यह भी बताया कि बच्चों का लालन-पालन माता-पिता द्वारा सावधानी से किया जाना चाहिए। बच्चों के जीवन में लालन-पालन का बहुत महत्व होता है और माता-पिता को बच्चों के सामने अपने बड़ों के प्रति उचित व्यवहार करना चाहिए। ये बातें शुरू में करुण रस उत्पन्न करती हैं, लेकिन बाद में करुण से भय की भावना में बदल जाती हैं, जो भय का विभाव है। इस स्थान पर फिल्म निर्माता गुलज़ार ने प्रमुख पात्र की वाणी से ये संवाद निकलवाए थे, जब बुधिया के छोटे बेटे ने काकी को 'कचौड़ी' दिखाकर चिढ़ाया और लुभाया था। काकी कांपती हुई और पत्थरों और बोल्लरों पर लटकती हुई उठीं। उन्हें शारीरिक चोट लगी, जिसे दृश्य में दिखाया गया था क्योंकि वे ठीक से चल नहीं पा रही थीं। इसके तुरंत बाद, वे धीरे-धीरे चलने लगीं और उस समय उनके चेहरे के भाव से उनकी मानसिक पीड़ा का पता चलता है। उस क्षण भी दर्शक का हृदय करुण रस से भर जाता है, दर्शक की आंखों से काकी के आंसू निकल आते हैं।

लेखक ने इस पुस्तक में लिखा है कि यदि काकी से कोई प्रेम करता था तो वह केवल लाडली थी, जो किसी न किसी रूप में स्वार्थ से ग्रसित थी, तथा बाल मनोविज्ञान के अनुसार असुरक्षा की भावना काकी की ओर ले जाती थी। लाडली अपनी सुरक्षा के लिए काकी के पास आती थी, ताकि अपने दो बड़े भाइयों से खाने की चीजें छिपा सके, लेकिन इस तरह के आपसी सामंजस्य के कारण अंततः उसे काकी के साथ ही खाना बांटना पड़ता था, जिससे उनमें वास्तविक साहचर्य का विकास होता था। इससे लाडली की मासूमियत के प्रति प्रेम तथा काकी की अकेलेपन में उदारता के प्रति करुण रस उत्पन्न होता है।

लेकिन फिल्मकार गुलज़ार ने लाडली में कभी स्वार्थ नहीं दिखाया। उन्होंने बचपन को मानवीय-कमजोरी की ऐसी भावनाओं से अछूता रहने दिया। यहां गुलज़ार ने प्रेमचंद के आदर्शवाद को स्थापित किया। हालांकि इस संदर्भ में प्रेमचंद ने पाठ में समाज के आदर्शवाद की बलि दे दी है। इसके एवज में वे यथार्थवाद पर जोर देते हैं। दृश्य प्रस्तुति में लाडली का चरित्र निश्चित रूप से दर्शकों को वीर रस से ओतप्रोत कर देता है, क्योंकि उसने छोटी सी उम्र में ही परिपक्व अभिनय किया है। बचपन को आमतौर पर खान-पान और स्वाद की उम्र माना जाता है। लाडली ने अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण रखा। कैसे वह काकी को छुपे-छुपे तरीके से स्वादिष्ट भोजन, कचौड़ी, दूध, शरबत, पूरी सब कुछ देती थी। दरअसल बहादुरी की गिनती युद्ध के मैदान में ही की जाती है, लेकिन सही मायने में बहादुरी अपनी भावनाओं और इच्छाओं पर नियंत्रण और संघर्ष करने में होती है, जिसे लाडली ने पाठ के दृश्य रूप में बखूबी निभाया है या यूँ कहें कि बहादुरी हमेशा वहीं होती है, जहां समाज की भलाई की बात होती है।

फिल्म निर्माता ने जिस लाडली को दिखाया है, वह मासूमियत और स्वार्थ से भरी हुई है, स्वार्थी समाज में अपने ही परिवार के सदस्यों के कारण अपने ही घर में खाने की चीजें चुराने को मजबूर है। वह दर्शकों को त्याग का पाठ पढ़ाने में सक्षम है। आशीर्वाद, मधुरता, उल्लास, चौड़ी आंखों में उदारता, उत्सुकता, सरल बाल भाव, मधुर स्वर, अपरिपक्व आवाज और साहस से भरे उसके व्यवहार से अद्भुत रस उत्पन्न होता है।

मनुष्य के निजी स्वार्थ के आगे सभी धार्मिक सामाजिक नियम-कायदे बेअसर लगते हैं, निरर्थक बाधा बनकर काम करते हैं। चाहे रूपा हो, काकी हो या बुद्धिराम सभी अपने स्वार्थ से बुरी तरह

प्रभावित और नियंत्रित हैं। बूढ़ी काकी के दोनों माध्यमों में देखा जा सकता है कि काकी का एक ही लक्ष्य है, वह है भूख का उद्देश्य। दोनों ही कृतियों में उनकी एक ही इच्छा है और रचनाकार ने शुरू से अंत तक उन्हें चित्रित करने का प्रयास किया है। काकी ने कभी भी लाडली के साथ देने, बांटने जैसी उदारता की परिपक्वता नहीं दिखाई। इसके बजाय लाडली में परिपक्वता, उदारता, त्याग, स्नेह, अपनी काकी के प्रति देखभाल जैसे गुण दिखाई देते हैं। फिल्म में वह नियमित रूप से काकी के लिए अपने हिस्से का खाना चुपके से लाती थी।

इतना कुछ होने के बावजूद काकी का मातृत्व और नारी हृदय कभी दया से नहीं पिघला, उनकी भूख की चरम अवस्था, उसकी पराकाष्ठा को लेखक और फिल्मकार ने अपनी-अपनी रचनाओं में दिखाया है, जब काकी पुरानी पत्तियों के बीच बैठी हुई बची हुई खाने की चीजें खा रही थीं। साथ ही, उनकी लालच और पेटपन की आदतें मौन रूप से व्यक्त हो रही थीं। इससे पाठकों और दर्शकों के लिए समझने की गुंजाइश बनी हुई थी।

"बुढ़ापा तृष्णा रोग का अंतिम समय है, जब संपूर्ण इच्छाएँ एक ही केंद्र पर आती हैं। बूढ़ी काकी में यह केंद्र उनकी स्वदेशीय थी" (प्रेमचंद 51)।

यहां इस बिंदु पर रौद्र रस मन और हृदय के द्वार पर दस्तक देता है, लेकिन काकी के भतीजे बुद्धिराम के अशिष्ट व्यवहार और उसकी अर्धांगिनी का काकी के प्रति व्यवहार सहित कारण, परिस्थिति और युग को समझने के बाद यह करुण रस के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

इस कहानी का अंत यह दर्शाता है कि यह कहानी परिपक्व मनःस्थिति में नहीं लिखी गई थी। प्रेमचंद ने यह कहानी अपने लेखन के अंतिम चरण में लिखी है क्योंकि यह यथार्थवाद से आदर्शवाद का रूप लेती है। इसके अनुसार आरंभ और मध्य में जो कुछ भी हुआ; बुरी से बुरी स्थिति और गलतियाँ सभी चीजें अंत में सुलझ जाती हैं भविष्य के लिए आदर्शवाद स्थापित करने के तरीके से अंत। इसका मतलब है कि आखिरकार सब कुछ ठीक हो गया है।

रूपा के हृदय और व्यवहार में आए बदलावों के माध्यम से लेखक ने गांधीवाद को स्थापित करने की कोशिश की है, जब उसे अपनी गलतियों का एहसास होता है। लेखक ने रूपा के हृदय में ईश्वर के प्रति पश्चात्ताप के साथ भय के बीज बोए हैं, क्योंकि उसे अपने बच्चों के संदर्भ में अपने भविष्य का एहसास होता है। कल्पना में वह खुद को काकी के स्थान पर रखकर अपनी गलती का एहसास करती है।

रूपा ने कंठवृद्ध स्वर में कहा- काकी उठो, भोजन के लो। मुझसे आज बड़ी भूल हुई, उसका बुरा ना मानना। परमात्मा से प्रार्थना केर दो कि वह मेरा अप्राध क्षमा केर दे (प्रेमचंद 52)।

निर्णय के इस बिंदु पर, दृश्य रूप में प्रेमचंद की कहानी गुलज़ार की बूढ़ी काकी की तुलना में अपील की शक्ति में थोड़ी कमज़ोर लगती है। गुलज़ार ने फिल्म को उस चरम पर समाप्त किया जहाँ भावना और प्रतिक्रिया व्यक्तिगत धारणा पर निर्भर करती है। उन्होंने समझने, महसूस करने और विश्लेषण करने के लिए जगह छोड़ी। उन्होंने फिल्म को यह बताते हुए समाप्त किया कि काकी बासी बचे हुए खाने के पास बैठी थीं, कूड़े में पत्तों की प्लेटें फैली हुई थीं, जहाँ बहुत सारी मक्खियाँ चहचहा रही थीं, रोशनी बहुत कम थी। लगभग आधी रात का समय था, फिल्म में कुत्तों के भौंकने की आवाज़ आसानी से सुनी जा सकती थी। रूपा काकी के लिए खाने की पूरी सजी हुई थालियाँ लेकर खड़ी थी, काकी को देखकर रूपा की आँखें डर और आँसू से भर गईं जो लापरवाही से

बचा हुआ गंदा खाना मजे से खाने में व्यस्त थीं। अचानक काकी ने रूपा को देखा और मुस्कुरा दी। इस समय फिल्म निर्माता ने फिल्म समाप्त कर दी। काकी की यह अन्तिम मुस्कान व्यंग्यपूर्ण, सराहनीय प्रतीत होती है, जो कहीं न कहीं परिवार के सदस्यों के दुर्व्यवहार को भी इंगित करती है, तथा इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति से होने वाली संतुष्टि को भी स्पष्ट करती है।

काकी को ऐसी अवस्था में पाकर, ऐसी अकल्पनीय, अप्रत्याशित स्थिति में बैठकर भोजन करने से ऐसे असभ्य स्वार्थी लोगों के लिए वीभत्स और फिर रौद्र रस उत्पन्न होता है।

4. सदगति

सदगतिप्रेमचंद की सच्ची प्रतिनिधि कहानियों में से एक मानी जाती है। इसके माध्यम से उन्होंने ऐसे मुद्दों को केंद्र में लाने की कोशिश की है जो परिधि पर छिपे रूप में सबसे अंधेरे कोनों में पड़े थे। उन्होंने उन दलितों को जीवन की सांस देने की कोशिश की है जो गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे थे और अभिशापपूर्ण जीवन जीने के लिए मजबूर थे, दैनिक दिनचर्या की कुछ जरूरतों के लिए उन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता था, जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष करना पड़ता था। प्रेमचंद ने अपनी विशिष्ट यथार्थवादी लेखन शैली के माध्यम से समाज की तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों को प्रतिबिंबित किया है जिसमें अशिक्षा, गरीबी, जातिवाद, अंधविश्वास और इसके अलावा सामंतवाद एक महत्वपूर्ण कारण के रूप में मनुष्य ही मनुष्य का दुश्मन बन गया है। छुआछूत की अमानवीय भावना समाज में एक बुराई के रूप में विकसित होती है।

इस कहानी में पिछड़े वर्ग, खासकर दलितों के प्रति उच्च जाति और वर्ग के लोगों के व्यवहार को देखना जरूरी है। सामंतों और उच्च वर्ग के लोगों की आर्थिक स्थिति काफी अच्छी थी और वे खुद को ही श्रेष्ठ मानने की भावना से भरे हुए थे। इसका मतलब है कि अन्य समुदाय, जाति और पंथ के लोग उनसे कमतर थे। इस पहलू को लेकर उनके मन में मनोवैज्ञानिक दबाव था जो उनके विचारों, वाणी और गतिविधियों में आसानी से झलकता था।

प्रेमचंद के उपन्यासों में ब्राह्मणवाद का उदाहरण आसानी से मिल जाता है, जिसका श्रेय ब्राह्मण समाज के उन लोगों को जाता है, जो सर्वोच्च पद पर आसीन होने का अधिकार रखते थे और अपने स्वार्थी की पूर्ति के लिए तथाकथित धार्मिक कर्मकांडों और पौराणिक तथ्यों और घटनाओं का इस्तेमाल तर्कों के साथ अपनी बात को साबित करने के लिए करते थे। धर्म के नाम पर उन्होंने पाखंड की स्थापना की और यही उनकी कमाई का मुख्य आधार था, जो बिना किसी परेशानी के चलता रहा। उन्होंने अपना शिक्षण और उपदेश का पेशा बदल कर एक धर्म के नाम पर ...

अज्ञानी लोगों को मूर्ख बनाने के लिए, भोले-भाले अनपढ़ लोगों को मूर्ख बनाया जाता था। इन कारणों से ब्राह्मणवाद उस युग के समकालीन भारतीय समाज में सामाजिक बुराई में से एक बन गया था।

5. पूस की रात

पूस की रातप्रेमचंद की एक और अद्भुत कहानी है जो गरीबों की पीड़ा की एक और तस्वीर या स्थिति प्रस्तुत करती है। कहानी कई मायनों में महत्वपूर्ण है। यह दिखाती है कि कैसे मनुष्य और जानवर प्राकृतिक आपदाओं का सामना करते हैं या उनसे निपटते हैं। पर्याप्त स्थिति में प्रतिरोध के लिए वे कैसे अपने बीच एक महान बंधन बनाते हैं, वे अपनी एकता के माध्यम से अप्रतिरोध्य प्राकृतिक स्थिति से उबर जाते हैं। कहानी ने इस सिद्धांत को भी

उजागर किया कि भले ही कोई बहुत गरीब हो और कोई जानवर बहुत सभ्य न हो, फिर भी उनमें सहनशीलता, प्रेम और समायोजन की शक्ति समान रूप से होती है। गरीबी और अन्य बाधाएँ जैसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक परिस्थितियाँ किसी के उत्साह को कम नहीं कर सकती हैं।

प्रेमचंद के उपन्यास गोदान के होरी के पात्र की तरह पूस की रात का हल्कू भी मुख्यतः किसान था। सामंतवाद और गरीबी के अभिशाप के साथ-साथ बढ़ते ब्याज और कर्ज ने उसे किसान से मजदूर बनने पर मजबूर कर दिया था। भारतीय जलवायु कैलेंडर के अनुसार पूस की रात सबसे ठंडी रात होती है। भारतीय ज्योतिष के अनुसार माना जाता है कि इस महीने में कोई भी शुभ कार्य नहीं किया जा सकता। लेखक प्रेमचंद ने ब्राह्मणवाद और धार्मिक कर्मकांड के नाम पर छिपी ऐसी ही सामाजिक बुराई के बारे में बहुत कुछ लिखा है। यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद ने भारतीय समाज में धर्म के नाम पर चल रहे पाखंड को उजागर किया है। उन्होंने अपने समय के उन तथ्यों को कलमबद्ध किया है, जिससे लोगों को आजादी से पहले के समाज और उनकी रचनाओं के पीछे की परिस्थितियों का पता चल सके।

इस कहानी के आधार पर गुलज़ार ने इसी शीर्षक से टेली-फिल्म बनाई थी। पूस की रात को उस काली, उदास, ठंडी रात के रूप में कहा जा सकता है जिसने हल्कू के छोटे-छोटे दुखों को कम से ज़्यादा में बदल दिया। शगुन से किसान, मजदूर या गुलाम बनने की रात ने इन लोगों के जीवन को और भी ज़्यादा दर्द और असुरक्षा से भर दिया।

6. ईदगाह

प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी ईदगाह गरीबी और बचपन में एक बच्चे की परिपक्वता जैसे सामाजिक मुद्दों के ईर्द-गिर्द घूमती है। इस कहानी में गरीबी से निपटने का तरीका बाकी कहानियों से काफी अलग है। मूल रूप से प्रेमचंद ने ईद के त्यौहार को गरीबी का विश्लेषण करने के लिए एक माध्यम के रूप में इस्तेमाल किया है। आम तौर पर त्यौहार का मतलब होता है खुशियाँ मनाना और जश्र मनाना। लेकिन इस कहानी के अनुसार समाज के गरीब तबके के लोगों के लिए हर त्यौहार दुख का प्रतीक होता है, उनका उत्सव और परंपराएं महज एक औपचारिकता बन जाती हैं जो सिर्फ रस्मों को निभाने के लिए जरूरी होती हैं।

इस्लामी समुदाय की अन्य महिलाओं की तरह अमीना भी एक छोटे बच्चे की दादी होने के नाते हामिद के साथ ईद मनाना चाहती थी, लेकिन उसकी आर्थिक स्थिति उसे ऐसा करने की अनुमति नहीं देती थी। उसे ईद की रस्में पूरी करनी थीं, इसलिए उसने ईद की खास मिठाई 'सेवइयां' की सामग्री का प्रबंध करने के लिए कड़ी मेहनत की। किसी तरह वह हामिद को ईदगाह परिसर में लगे मेले का आनंद लेने के लिए 'ईदी' के तौर पर तीन पैसे देने में कामयाब हो गई। कहानी में अमीना की बेबसी को लेखिका ने साफ तौर पर दर्शाया है कि वह ईद नहीं मनाना चाहती थी, क्योंकि उसे अपने बेटे की याद आती थी, जो हैजा से मर गया था और बहू भी एक अज्ञात बीमारी से मर गई थी, जो चिकित्सा सुविधाओं की कमी, अशिक्षा और सामाजिक जागरूकता के कारण हुई थी। ये सामाजिक स्थितियाँ थीं, जिनका लेखिका ने चित्रण किया है। हामिद की उम्र चार से पांच साल के बच्चे के रूप में बताई गई है, जो अपने माता-पिता की मौत के बारे में बिल्कुल भी नहीं जानता था। उसके लिए उसके माता-पिता लंबी यात्रा पर गए हैं और बहुत जल्द ही उसके लिए बहुत सारे उपहार लेकर लौटेंगे। हामिद की दादी की जिम्मेदारियों और उनकी परिस्थितियों के बारे

में सोचने पर, जिसमें सहारा-विहीन, असहाय सामाजिक स्थिति, बिना किसी आय के स्रोत के साथ बुढ़ापे में उनकी गरीबी और समाज में मौजूद दो तरह के भेदभाव यानी अमीरी और गरीबी को दर्शाया गया है। ये कारण अंदर से दुखी होने के लिए काफी हैं। पाठक का हृदय जो करुण रस उत्पन्न करता है। ऐसा लगता है कि प्रेमचंद ने तथाकथित समाज पर मार्क्सवादी सिद्धांत लागू करने का प्रयास किया है, जहां समाज दो वर्गों में विभाजित है, अमीर और गरीब और जहां पहला वर्ग हमेशा दूसरे पर हावी होने की कोशिश करता है। इस कहानी के माध्यम से प्रेमचंद ने गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की समस्याओं और पीड़ा को उजागर करने का प्रयास किया है। हामिद को ईद के माध्यम से अमीना की बेरंग जिंदगी में एक नया रंग भरते हुए दिखाया गया है, जो कहानी की शुरुआत में उसे एक बोझ की तरह लगी थी, लेकिन बाद में उसके लिए विशेष रूप से फलदायी साबित हुई। कहानी में अद्भुत रस भी महसूस किया जाता है जब चार या पांच साल का बच्चा अपनी दादी के बारे में सोच सकता है कि वह बिना चिमटे के रोटी बनाते समय अपनी उंगलियां जला लेती हैं। जैसा कि एक आम कहावत है कि प्रत्येक उपहार का मूल्यांकन देने वाले के इरादे और भावनात्मक भावना के आधार पर किया जाना चाहिए, न कि तथाकथित उपहार के अंकित मूल्य के आधार पर आंका जाना चाहिए।

7. निष्कर्ष

निष्कर्ष के तौर पर, प्रतिज्ञा में प्रेमचंद द्वारा इन पात्रों का चित्रण मानव व्यवहार की जटिलताओं और सामाजिक सुधार की आवश्यकता को दर्शाता है तथा जाति, लिंग और सामाजिक स्थिति पर आधारित सामाजिक बाधाओं को दूर करने में सहानुभूति, समानता और नैतिक अखंडता के महत्व पर प्रकाश डालता है जो व्यक्तियों को विभाजित करते हैं। उपन्यास के पहली बार लिखे जाने के बाद से अब तक जो पीढ़ियाँ गुजर चुकी हैं, उन्होंने "रवैया, संवेदनशीलता और आकांक्षा" में नाटकीय परिवर्तन देखे हैं। निर्मला का उपन्यास भारतीय समाज के उस समय का प्रतिबिंब है जब एक युवा लड़की का "सबसे बड़ा पाप एक ऐसे पति की मांग करना था जो उसे बिना दहेज के स्वीकार करे।"

8. संदर्भ

1. फातिमा श. प्रेमचंद की रचनाओं में हाशिए पर पड़े समाज का चित्रण. 2018।
2. गोविंद न. सामाजिक यथार्थवाद और नैतिक प्रभाव: मुंशी प्रेमचंद की दुनिया. 2019. DOI: 10.1002/9781118635193.ctwl0239।
3. सागरे स, मठपति डॉ. गोदान: सामाजिक यथार्थवाद का एक अध्ययन. Creative Launcher. 2020;5:23-29. DOI: 10.53032/tcl.2020.5.2.02।
4. सिंह श. प्रेमचंद, औपनिवेशिक उत्तर भारत में राष्ट्रवाद और नागरिक प्रतिरोध. Indian Economic and Social History Review. 2019;56(2):171-194. DOI: 10.1177/0019464619835663।
5. बोस अ. प्रेमचंद के कफन में हाशिये के जीवन के माध्यम से दलित चेतना के चित्रण में सरलता की खोज. International Journal for Multidisciplinary Research. 2023. DOI: 10.36948/ijfmr.2023.v05i04.4397।
6. हंट स. हिंदी दलित साहित्य और प्रतिनिधित्व की राजनीति. 2014. DOI: 10.4324/9781315733944।

7. सिंह श. औपनिवेशिक उत्तर भारत में नारीत्व के प्रेमचंद के बदलते चित्रण: अनुरूपता और प्रतिरोध के बीच. *Contributions to Indian Sociology*. 2020;54(3):414-439. DOI: 10.1177/0069966720947540
8. क्रमर प, कहंदला उ. प्रेमचंद: साझा संस्कृति के एक विपुल लेखक. *SSRN Electronic Journal*. 2021;8:146-149
9. कुमार स. भारत में सामाजिक परिवर्तन में दलित साहित्य की भूमिका. 2024. DOI: 10.36948/ijfmr.2024.v06i03.22076
10. कादिर ह. प्रेमचंद, नाटककार और नाटक आलोचक: औपनिवेशिक भारत में हिंदी रंगमंच का मूल्यांकन. *Literature, Critique and Empire Today*. 2024;60. DOI: 10.1177/30333962241267795
11. फेस्टिनो स. अनुवाद और सामाजिक कार्यवाई: गोवा में मुंशी प्रेमचंद की साहित्यिक कृतियों का मामला. *Cadernos de Traducao*. 2025;45:1-17. DOI: 10.5007/2175-7968.2025.e105439
12. भादुड़ी आ. 20वीं सदी की शुरुआत में महिलाओं का चित्रण: प्रेमचंद की चुनिंदा लघु कहानियों का एक पाठ. 2023;12:1-11. DOI: 10.5281/zenodo.7879951
13. शांडिल्य क. विधवा, पत्नी और वेश्या: प्रेमचंद के सेवासदन और उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध के बंगाली और उर्दू उपन्यास में सामाजिक सुधार का तुलनात्मक अध्ययन. *Comparative Literature Studies*. 2016;53:272-288. DOI: 10.5325/complitstudies.53.2.0272
14. गुप्ता र. प्रेमचंद की कर्मभूमि और गोदान में महिला प्रश्न का प्रतिनिधित्व और समाधान. *South Asian Review*. 2023;45:1-14. doi:10.1080/02759527.2023.2173903
15. त्रिवेदी ह. टैगोर का राष्ट्रवाद और प्रेमचंद का: एक पूरक तुलना. 2017. DOI: 10.1007/978-81-322-3696-2_14

Creative Commons (CC) License

This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.